HINDI
motivational stories

PART - I

© www.motivationalstoriesinhindi.in

तत्वों के उचित संयोजन से बनता है हमारा व्यक्तित्व

एक बार **राजा मिलिंद** भिक्षु के पास गए। भिक्षु का नाम नागसेन था। राजा ने भिक्षु से पूछा–महाराज एक बात बताइए, आप कहते हैं कि हमारा व्यक्तित्व स्थिर नहीं है। जीव स्वयंमेव कुछ नहीं है, तो फिर जो आपका नाम नागसेन है यह नागसेन कौन है? क्या सिर के बाल नागसेन हैं? भिक्षु ने कहा– ऐसा नहीं है। राजा ने फिर पूछा – क्या ये दांत, मस्तिष्क, मांस आदि नागसेन हैं? भिक्षु ने कहा–नहीं। राजा ने फिर पूछा–फिर आप बताएं क्या आकार, संस्कार, समस्त वेदनाएं नागसेन हैं? भिक्षु ने कहा–नहीं। राजा ने फिर प्रश्न किया–क्या ये सब वस्तुएं मिलकर नागसेन हैं? या इनके बाहर कोई ऐसी वस्तु है जो नागसेन है? भिक्षु ने कहा नहीं। अब राजा बोले– तो फिर नागसेन कुछ नहीं है। **जिसे हम अपने सामने देखते हैं और नागसेन कहते हैं वह नागसेन कौन हैं?**

अब भिक्षु ने राजा से पूछा? राजन, क्या आप पैदल आए हैं? राजा ने कहा– नहीं, रथ पर। भिक्षु ने पूछा–फिर तो आप जरूर जानते होंगे कि **रथ क्या है?** क्या यह पताका रथ है? राजा ने कहा–नहीं। भिक्षु बोले– क्या ये पहिए या धुरी रथ हैं? राजा ने कहा– नहीं। भिक्षु ने पूछा–क्या ये रस्सियां या चाबुक रथ हैं? राजा ने कहा नहीं। भिक्षु ने पूछा–क्या इन सबके बाहर कोई अन्य चीज है, जिसे हम रथ कहते हैं? राजा ने कहा–नहीं। भिक्षु ने कहा–तो फिर, रथ कुछ नहीं है? **जिसे हम सामने देखते हैं और रथ कहते वह क्या है?** राजा ने कहा–इन सब चीजों के एक साथ होने पर ही इसे रथ कहा जाता है। भिक्षु ने कहा–राजन, इसमें ही आपकी जिज्ञासा का हल छिपा है। **जिस प्रकार इन वस्तुओं के उचित तालमेल से रथ का निर्माण हुआ है, ठीक उसी प्रकार अग्नि, पृथ्वी, आकाश, जल और वायु इन पाँच तत्वों के समुचित संयोजन से बना शरीर ही नागसेन है।** इसके इतिरिक्त कुछ नहीं।

निष्कर्ष :

किसी वस्तु को सही आकार इसके घटकों के उचित संयोजन से ही मिलता है। इसके बाद ही कोई तत्व अपनी संपूर्णता तक पहुँचता है।

याद रखें.....

व्यक्तित्व (Personality) का सम्बन्ध उन गहराइयों से है जो हमारी चेतना को विकसित करती हैं, अर्थात् जो हर क्षण हमारे व्यवहार, आचरण और हमारी चेष्टाओं में अभिव्यक्त होती रहती है। स्पष्ट है, व्यक्तित्व का अर्थ केवल व्यक्ति के बाह्य गुणा (External factors), जैसे – रूप–रंग, चाल–ढाल, पहचावा, बोलचाल आदि से नहीं है, उसके आंतरिक गुणों (Internal factors or instrinsic qualities) से भी है, जैसे– चरित्र–बल, इच्छा–शक्ति, आत्म–विश्वास, मन की एकाग्रता आदि। इस प्रकार व्यक्तित्व का अर्थ व्यक्ति के बाह्य गुणों एवं आंतरिक गुणों के योग से है। यथार्थ में आन्तरिक गुणों के विकास से ही आपके व्यक्तित्व को संपूर्णता प्रदान होती है जिसे कंपलीट पर्सनेलिटी यानि डायनेमिक पर्सनेलिटी कहते हैं, जो किसी भी क्षेत्र में स्थायी सफलता का प्रमुख अंग मानी जाती है।

गुरू–भक्ति से मन की शुद्धि

नरेन डे (स्वामी विवेकानंद) अपने छात्र–जीवन में आर्थिक विषमता से जूझ रहे थे। एक दिन उन्होंने अपने **गुरू परमहंस रामकृष्ण** से कहा–'यदि आप काली माँ से प्रार्थना करेंगे, तो वह मेरे वर्तमान आर्थिक संकट दूर कर देंगी।' रामकृष्णजी बोले– 'नरेन, संकट तुम्हारे हैं, इसलिए तुम स्वयं मंदिर में जाकर काली मां से मांगो, वह अवश्य सुनेगी।' यह कहकर उसे मंदिर में भेज दिया। वहां उसने और कुछ न कहकर 'माँ मुझे भक्ति दो' कहा और फिर गुरू जी के निकट लौट आया। उन्होंने पूछा– 'क्या मांगा?' 'माँ मुझे भक्ति दो' नरेन ने कहा। 'अरे, इससे तेरे संकट दूर नहीं होंगे, तू फिर से अंदर जा और मां से स्पष्ट मांग' वह गया और उसने पूर्ववत् जैसा किया। जब तीसरी बार जाने पर भी उसने काली माँ से केवल यही कहा – 'माँ मुझे भक्ति दो,' तब परमहंस जी हंसे और कहने लगे– 'नरेन! मुझे मालूम था, तू भौतिक सुख नहीं मांगेगा, क्योंकि आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने की पूर्ण जिज्ञासा तेरे हृदय में उत्पन्न हो चुकी है और इसीलिए मैंने तुम्हें तीनों बार भक्ति मांगने के लिए ही अंदर भेजा था। तेरे वर्तमान आर्थिक संकट का सामाधान तो मैं स्वयं ही कर सकता था।'

तात्पर्य : एक विशुद्ध गुरू अथवा भक्त के सान्निध्य में रहने से मन का शुद्धिकरण करना सरल व सहज हो जाता है। हेनरी फोर्ड के प्रपौत्र **एल्फ्रेड फोर्ड** (हेनरी फोर्ड–3) ने 'इस्कॉन' के संस्थापक क्षीत् स्वामी प्रभुपाद की शिष्यता ग्रहण कर और उनके साथ भारत में कुछ महीने रहकर अपने मन की शुद्धी की थी, अर्थात् अध्यात्म का बीजारोपण किया था। बाद में स्वामीजी ने अपने शिष्य अम्बरी दास (हेनरी फोर्ड–3) को वापिस अमरीका भेज दिया था।

यह एक उत्तम उपाय बताया गया है, क्योंकि एक सच्चे गुरू के निकट उसके शिष्य का अन्तर्मन सदा बना रहता है और वे उसकी आत्म–उन्नति का मार्ग–दर्शन स्वयं करते रहते हैं। **आवश्यकता इस बात की कि हम मन की शुद्धि के लिए पहले जिज्ञासु (Inquisitive) बने और फिर संत की पहचान के विवेकी (Judicious) बने।**

जीवन से मत भागो, जिओ उद्‌देश्य के लिए

घटना उन दिनों की है जब इंगलैंड में **डॉक्टर एनी बेसेंट** अपने वर्तमान जीवन के प्रति निराश थीं और एक सार्थक जीवन जीने की ललक उनके हृदय में तीव्रता से उठी थी। एक दिन अंधेरी रात्रि सभी परिवारजन गहारी नींद में सोए हुए थे। केवल वही जाग रही थीं और आत्मा की शांति के लिए इतनी बचैन हो उठी कि इस जीवन से भाग जाने का ख्याल मन में लाकर सामने रखी जहर की शीशी लेने के लिए चुपके–से उठीं, लेकिन तभी किसी **दिव्य–शक्ति की आवाज** ने उन्हें आगे बढ़ने से रोक दिया – 'क्यों, जीवन से डर गई? सत्य की खोज कर।' ये सुनकर वह चौंक गई, 'अरे यह आवाज किसकी है? कौन मुझे भागने से रोक रहा है?' उन्होंने उसी समय निश्चय कर लिया – 'सार्थक जीवन (Meaningful life) के लिए मुझे संघर्ष करना ही होगा।'

सत्य की खोज के लिए वे अपना परिवार, सुख–सम्पत्ति आदि सब कुछ छोड़कर भारत आ गई। उन्होंने साध्वी जैसा जीवन यहां ग्रहण किया और विश्व को भारतीय जीवन–दर्शन के रंग में रंग देना ही अपना मुख्य उद्‌देश्य बना लिया। उनकी मृत्यु भारत में हुई थी।

निष्कर्ष :

अंधकार से प्रकाश की ओर जाने के लिए भी मनुष्य को संधर्ष करना पड़ता है, जिसके दौरान वह अपनी शुद्‌ध चेतना से समर्पण–भाव को जाग्रत कर जीवन–लक्ष्य की प्राप्ती कर लेता है। ऐसे संघर्षवान व्यक्ति की ईश्वर भी सहायता करता है, बशर्ते वह सच्ची लगन व उत्साह के साथ सार्थक जीवन के प्रति संकल्पकृत है और उसकी आँखें निर्धारित लक्ष्य पर केन्द्रित हैं।

याद रखें.....

जीवन सहज नहीं, एक संघर्ष है। कठिनाइयाँ एवं बाधाएं जीवन के अंग हैं। इनसे भयभीत होकर कर्तव्य–पथ से पलायन कर देने का अर्थ होगा– अपने जीवन–मूल्य को नष्ट कर देना। सत्य तो यह है कि कठिनाइयों और दुःखों पर विजय प्राप्त करके ही मानव ने इस भौतिक संसार का इतना ऊँचा विकास किया है। जब कड़वी दवाई के सेवन से रोग का निदान शीर्घ होता है, तब हम अपने जीवन–लक्ष्य की सिद्‌धी में संघर्ष करने से क्यों कतराएं? **हेनरी फोर्ड** का कथन ध्यान देने योग्य है–

"Obstacles are those frightful thing you see when you take your eyes off your goal."

त्रेता युग में क्षीरामजी को चौदह वर्ष का वनवास मिला था और फिर लंका पर विजय प्राप्त करने के पश्चात् लौटने पर रातगद्‌दी मिलते ही उन्हें सीताजी के निष्कासन पर 'एकला जीवन' लेना पड़ा था। द्‌वापर युग में क्षीकृष्ण के होते हुए भी धर्मराज युधिष्ठर सहित पाँचों पांडव–भाइयो को बारह वर्ष का वनवास और साथ में एक वर्ष का अज्ञातवास झेलना पड़ा था। **स्पष्ट है, यह जीवन–संघर्ष आदिकाल से चला आ रहा है। अतः सुंदर जीवन बनाने के लिए हमें संघर्ष के बीच तो रहना ही होगा, बाधाओं को पार करते हुए आगे बढ़ना होगा और तभी हम अपने जीवन–उद्‌देश्य की पूर्ति कर पाएंगे।**

सत्याचरण का प्रभाव

बात उन दिनों की है जब एक दिन पाटली–पुत्र नगर में **सम्राट् अशोक** गंगा नदी के किनारे टहल रहे थे। उनके साथ उनके मंत्रीगण, दरबारी व सैंकड़ों लोग भी थे। नदी अपने पूरे चढ़ाव पर थी। पानी के प्रबल वेग को देखते हुए सम्राट ने पूछा– 'क्या कोई ऐसा व्यक्ति है जो इस प्रबल गंगा का बहाव उल्टा कर सके?' यह सुनकर सब मौन हो गए। उस जनसमूह से कुछ दूरी पर **बिंदुमति** नामक बूढ़ी वेश्या खड़ी थी। वह सम्राट् के पास आकर बोली– 'महाराज, मैं आपके सत्य–कर्म की गुहार लगाकर यह कर सकती हूँ।' सम्राट् ने उसे आज्ञा दे दी। उस वेश्या की गुहार से प्रबल गंगा ऊपर की ओर उल्टी दिशा में गर्जन करते हुए बहने लगी।

सम्राट् अशोक भौंचक्के रह गए। उन्होंने वेश्या से पूछा कि उसने यह अद्‌भुत कार्य कैसे किया। वेश्या बोली – 'महाराज, सच्चाई की शक्ति से मैंने गंगा को उल्टी तरफ बहा दिया।' अविश्वास के साथ राजा ने पूछा, तुम एक साधारण सी वेश्या....तुम तो स्वाभाविक पापी हो!

बिंदुमति ने जवाब दिया– 'दुराचारी, चरित्रहीन स्त्री होकर भी मेरे पास 'सत्य कर्म' की शक्ति है। महाराज, जो भी मुझे रूपये देता–चाहे ब्राह्‌माण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र रहा हो या किसी अन्य जाति का रहा हो, मैं उन सबके साथ एक जैसा व्यवहार करती थी। जो मुझे रूपये देते थे, उन सबकी एक समान सेवा करती थी। महाराज, यही 'सत्य कर्म' है जिसके द्‌वारा मैंने प्रबल गंगा को उल्टी दिशा में बहा दिया।'

निष्कर्ष :

धर्म के प्रति सचाई मनुष्य को महान् शक्ति प्रदान करती है। यदि हम जीवनभर अपने कर्तव्य को पूर्ण निष्ठा से निभाएं, तो इस तथ्य को साक्षी रखकर चमत्कार का सकते हैं, जैसा कि बिंदुमति वेश्या ने कर दिखाया।

क्रोध द्वारा मनुष्य स्वयं की क्षति करता है

सार्वभौम चक्रवर्ती सम्राट् होते हुए भी **महाराजा अंबरीष** भौतिक सुखों से परे थे और सतोगुण के प्रतीक माने जाते थे। एक दिन वे एकादशी व्रत का पारण करने को थे कि **महर्षि दुर्वास** अपने शिष्यों के सहित वहां पहुँच गए। अंबरीष ने उनसे शिष्यों सहित भोजन ग्रहण करने का निमंत्रण दिया, जिसे दुर्वासा ने स्वीकार कर कहा, 'ठीक है राजन्, हमस सभी यमुना–स्नान करने जाते हैं और उसके बाद प्रसाद ग्रहण करेंगे।'

महर्षि को लौटने में विलंब हो गया और अंबरीष के व्रत–पारण की धड़ी आ पहुँची। राजगुरू ने उन्हें परामर्श दिया कि 'आप तुलसी–दल के साथ जल पीकर पारण कर लें। इससे पारण–विधि भी हो जाएगी और दुर्वासा को भोजन कराने से पूर्व ही पारण कर के पाप से भी बच जाएंगे।' अंबरीष ने जल ग्रहण कर लिया।

दुर्वासा मुनि लौटे तो उन्होंने योगबल से राजन् का पारण जान लिया और इसे अपना अपमान समझकर महर्षि ने क्रोधित होकर अपनी एक जटा नौंची और अंबरीष पर फेंक दी। वह **कृत्या नामक राक्षसी** बनकर राजन् पर दौड़ी। भगवान विष्णु का सुदर्शन–चक्र, जो राजा अंबरीय की सुरक्षा के लिए वहां तैनात रहता था, दुर्वासा को मारने उनके पीछे दौड़ा। दुर्वासा ने इन्द्र, ब्रह्मा और शिव की स्तुति कर उनकी शरण लेनी चाही, लेकिन सभी ने अपनी असमर्थता जतायी। लाचार होकर वे शेषशायी विष्णु की शरण गए, जिनका सुदर्शन–चक्र अभी भी मुनि का पीछा कर रहा था। भगवान विष्णु ने भी यह कहकर विवशता जताई कि मैं तो स्वयं भक्तों के वश में हूं। तुम्हें भक्त अंबरीष की ही शरण में जाना चाहिए, जिसे निर्दोष होते हुए भी तुमने क्रोधवश प्रताड़ित किया है।' हारकर क्रोधी दुर्वासा को राजा अंबरीष की शरण में जाना पड़ा। राजा ने उनका चरण–स्पर्श किया और सुदर्शन–चक्र लौट गया।

तात्पर्य यह है कि क्रोध ऐसा तमोगुण है जिसका धारणकर्ता दूसरों के सम्मान का अधिकारी नहीं रह जाता, यहां तक कि भगवान् भी उसे अपनी शरण नहीं देते।

गीता भी कहती हैं–

क्रोध से मोह उत्पन्न होता है और मोह से स्मरणशक्ति का विभ्रम हो जाता है। जब स्मरणशक्ति भ्रमित हो जाती है, तो बुद्धि का नाश होने पर मनुष्य अपनी स्थिति से गिर जाता है।

‘उत्साह‘ हमें जिंदादिल बनाए रखता है

अमरीका में जीवन बीमा के विक्रय क्षेत्र में सार्वाधिक ख्याति प्राप्त **फ्रैंक बैजर** अपने व्यवसाय के आरंभिक काल में असफल हो चुके थे और उन्होंने अपने बीमा कंपनी के पद से पद से इस्तीफा देने का निर्णय ले लिया था। एक दिन वे इस्तीफा लेकर कार्यालय पहुंच गए। उस समय प्रबंधक महोदय अपने विक्रेताओं की बैठक को संबोधित कर रहे थे। बैजर प्रबंधक–कक्ष के बाहर प्रतीक्षा करने लगे। अंदर से आवाज आई– **‘मैं जानता हूँ कि आप सभी योग्य विक्रेता हैं, किंतु आप यह विशेष ध्यान रखें कि योग्यता से भी अधिक महत्वपूर्ण है उत्साह, आपका जोश, जीवन की ऊर्जा, जो मंजिल की दिशा में आपकी सहायता करती है। आपका उत्साह, आपकी उमंग ही आपको सफलता के शिखर पर पहुंचा सकता है।‘**

इन शब्दों को सुनकर बैजर ने अपना निर्णय बदल दिया और जेब में रखे इस्तीफे को उसी समय फाड़ दिया। वे फौरन अपने घर चले गए। दूसरे दिन से फ्रैंक बैजर ने अपने काम को बड़े उत्साह के साथ करना शुरू किया। उनके उत्साह से ग्राहक इतने प्रभावित हुए कि कुछ वर्षों में वे अमरीका के नंबर वन सेल्समैन बन गए।

निष्कर्ष :

उत्साही जीवन के संघर्ष में धन की आवश्यकता नहीं होती, बल्कि धन के बार–बार नष्ट हो जाने पर भी व्यक्ति उसे पैदा कर लेता है। **उत्साह वह अग्नि है जो हमारे शरीर रूपी इंजन के लिए भाप तैयार करती है।**

अपने स्वाभिमान को सदैव ऊँचा रखें

आपने भी देखा होगा, बड़े शहरों में सार्वजनिक स्थलों पर कुछ भिखारी अपने कटोरे में साधारण बॉल पैन, रिफिल, पेंसिल, पॉकेट साइज कंघा या अन्य कोई छोटी–मोटी चीजें रखकर बैटते हैं। एक सज्जन ऐ भिखारी के कटोरा में ऐ दो रूपए का सिक्का डालकर वहीं खड़े–खड़े उसके बारे में सोचने लगे और कुछ क्षण बाद वह आगे चलने को मुड़े ही िकवह भिखारी बोला, 'बाबू साब! टापने दो रूपये का सिक्का तो कटोरा में डाला दिया, पर उसमें रखी पैंसिल या रिफिल आपने नहीं ली। आपको जो पसंद हो, उठा लीजिए साब!' सज्जन बोले– 'भई, मैंने तो भिखारी समझकर मुम्हें सिक्का दिया है।' 'नहीं, बाबू साब!' उसके बदले कुछ तो ले लीजिए, भले ही पचास पैसे की हो। अब वह सज्जन असमंजस में पड़ गए कि वह भिखारी है या दुकानदार! और उसकी ओर मुस्कुराते हुए देखने लगे। भिखारी बोला – 'साहब, हालात ने मुझे भिखारी जरूर बना दिया है, लेकिन मेरा थोड़ा–सा आत्म–सम्मान अब भी बचा है। अगर आप सिक्के के बदले कुछ भी ले लेंगे तो मुझे कम–से–कम इतना संतोष रहेगा कि भिखारी होने के बावजूद मैंने अपना स्वाभ्मिान नहीं खोया है।'

यह सुनकर उस सज्जन की आँखें भर आईं। उन्होंने अपने पर्स से 100–100 रूपए के दो नोट निकालकर उस भिखारी के हाथ में दिए और कटोरे में रखा सारा सामान (जो 50 रूपए से ज्यादा मूल्य का नहीं था) लेकर उससे पूछा – 'भईया दो सौ रूपए कम तो नहीं हैं?' वह भिखारी कृतज्ञ होकर रूंधे कंठ से बोला –'साहब, मैं आपका शुक्रिया किन शब्दों से अदा करूं? आपने तो दरिद्रनारायण के रूप में आकर मेरे स्वाभिमान को फिर से ऊँचा कर दिया है। यह तो मेरा जीवन बदल देगा। मैं आज ही इन रूप्यों से सुबह और शाम का अखबार बेचना शुरू कर दूँगा और फिर भिखारी बनकर कभी नहीं जिऊंगा।'

निष्कर्ष :

प्रत्येक मनुष्य में आत्म–सम्मान की भावना होती है–किसी में कम तो किसी में ज्यादा। एक संत ने मुझे बताया–'यह जीवन बार–बार नहीं मिलता है। अब समय है मनुष्य उस चीज को पकड़े जो उसके भीतर है और फिर उसे समझने की कोशिश करे। अपने हृदय की प्यास बुझाए ताकि जीवन में शांति आ सके।'

इसका सार यह है कि हम पहले खुद को जानें, अपनी पहचान करें और फिर खुद को सही रास्ते पर लाकर आनंद से जिएं।

सर्वोत्तम बनने की इच्छा–शक्ति को विकसित करें

एक राजकुमार अपने सुंदर बगीचे में टहल रहे थे कि अचानक उनके मन में ख्याल आया, 'बगीचे से उन्हें क्या फायदा है?' राजकुमार ने आम के पेड़ से पूछा –'बताओ, तुम मेरे लिए क्या कर रहे हो?' पेड़ ने जवाब दिया – 'गर्मी में मेरी शाखायें मीठे आमों से लद जाती हैं, माली उन्हें इक्ट्ठा करके आपको व आपके मेहमानों के सामने प्रस्तुत करता है।'

'शाबाश', राजकुमार बोले।

फिर राजकुमार ने विशाल वट वृक्ष से यही प्रश्न किया। उस ने उत्तर दिया – 'सुबह–सुबह जो पक्षी मधुर गीत गाकर आपको उठाते हैं, वह चहचहाते पक्षी मेरी शाखाओं पर आराम करते हैं। मेरी फैली शाखाओं के नीचे ही आपकी भेड़ें व गाय–भैंसें आराम करती है।' 'शाबाश' –राजकुमार ने कहा।

अब राजकुमार ने घास से पूछा – 'तुम मेरे लिए क्या कर रही हो?' घास ने उत्तर दिया – 'आपकी भेड़ें व गाय को पुष्ट बनाने के लिए हम अपना बलिदान देते हैं।' राजकुमार प्रश्न्न होकर बोले, 'बहुत अच्छा।' इसके बाद राजकुमार ने **एक नन्हें डेजी फूल** से पूछा – 'नन्हें मियां, तुम मेरे लिए क्या कर रहे हो?' डेजी ने कहा– 'कुछ नहीं। मैं आपको मीठे फल नहीं देता, आपके पक्षियों को घोंसला बनाने लायक स्थान नहीं दे सकता। यदि मैं कुछ कर सकता हूँ तो वह यह है कि जितना हो सके, मैं एक सर्वोत्तम नन्हा डेजी बनूं।' ये शब्द राजकुमार के दिल को छू गये। घुटनों के बल झुककर उन्होंने नन्हें डेजी को चूम लिया और कहा – 'शाबाश! नन्हें फूल। तुम–जैसा और कोई नहीं है। मैं तुम्हें हमेशा अपने परिधान के बटन–होल में लगाऊंगा, ताकि मुझे यह महान् सच्चाई हमेशा याद रहे कि मैं जहां तक हो सके अपने अंदर सर्वोत्तम बनने की इच्छा–शक्ति को विकसित करूँ। यह मेरे जीवन की बड़ी उपलब्धि होगी।'

सबक :

ऊँची उपलब्धि हासिल करने के लिए हमें अपनी इच्छा–शक्ति को विकसित करने की प्रेरणा किसी से मिल सकती है, बशर्ते हम हर समय अपनी जागरूकता बनाए रखें। यह तभी संभव है जब हमारा नजरिया सकारात्मक है। इस प्रसंग में राजकुमार ने प्रकृति के सौंदर्य से विमुग्ध होकर स्वयं सर्वोत्तम बनने की इच्छा–शक्ति को अपने अंदर विकसित किया।

ज्ञान हमेशा झुककर हासिल किया जा सकता है

एक शिष्य गुरू के पास आया। शिष्य पंडित था और मशहूर भी, गुरू से भी ज्यादा। सारे शास्त्र उसे कंठस्थ थे। समस्या यह थी कि सभी शास्त्र कंठस्थ होने के बाद भी वह सत्य की खोज नहीं कर सका था। ऐसे में जीवन के अंतिम क्षणों में उसने गुरू की तलाश शुरू की। संयोग से गुरू मिल गए। वह उनकी शरण में पहुँचा।

गुरू ने पंडित की तरफ देखा और कहा, 'तुम लिख लाओ कि तुम क्या–क्या जानते हो। तुम जो जानते हो, फिर उसकी क्या बात करनी है। तुम जो नहीं जानते हो, वह तुम्हें बता दूंगा।' शिष्य को वापस आने में सालभर लग गया, क्योंकि उसे तो बहुत शास्त्र याद थे। वह सब लिखता ही रहा, लिखता ही रहा। कई हजार पृष्ठ भर गए। पोथी लेकर आया। गुरू ने फिर कहा, 'यह बहुत ज्यादा है। मैं बूढ़ा हो गया। मेरी मृत्यु करीब है। इतना न पढ़ सकूंगा। तुम इसे संक्षिप्त कर लाओ, सार लिख लाओ।'

पंडित फिर चला गया। तीन महीने लग गए। अब केवल सौ पृष्ठ थे। गुरू ने कहा, मैं 'यह भी ज्यादा है। इसे और संक्षिप्त कर लाओ।' कुछ समय बाद शिष्य लौटा। एक ही पन्ने पर सार–सूत्र लिख लाया था, लेकिन गुरू बिल्कुल मरने के करीब थे। कहा, 'तुम्हारे लिए ही रूका हूँ। तुम्हें समझ कब आएगी? और संक्षिप्त कर लाओ।' शिष्य को होश आया। भागा दूसरे कमरे से एक खाली कागज ले आया। गुरू के हाथ में खाली कागज दिया। गुरू ने कहा, 'अब तुम शिष्य हुए। मुझसे तुम्हारा संबंध बना रहेगा।' **कोरा कागज लाने का अर्थ हुआ, मुझे कुछ भी पता नहीं, मैं अज्ञानी हूँ। जो ऐसे भाव रख सके गुरू के पास, वही शिष्य है।**

निष्कर्ष :

गुरू तो ज्ञान–प्राप्ति का प्रमुख स्त्रोत है, उसे अज्ञानी बनकर ही हासिल किया जा सकता है। पंडित बनने से गुरू नहीं मिलते।

www.motivationalstoriesinhindi.in